सी. राजगोपालाचारी

बनाम

मद्रास निगम

(पी. बी. गजेन्द्रगडकर, सी. जे., के. एन. वांचू, जे. सी. शाह, एन. राजगोपाला अयंगर और एस. एम. सिकरी न्यायमूर्तीगण)

नगर पालिका अधिनियम 1919 (1919 का अधिनियम सं. 4),धारा 111 (ख) भारत सरकार अधिनियम, 1935, धारा 142 क (i), 143 (2), 292, भारत का संविधान, अनुच्छेद. 277 – पेंशन प्राप्त करना – क्या अधिनियम के अर्थ अंतर्गत नियोजन या वृत्ति केतुल्य है -क्या कर योग्य है?

अपीलार्थी ने भारत के अंतिम गवर्नर-जनरल के रूप में पद संभाला। वह मद्रास शहर में रहते हुए पेंशन के रूप में प्रति वर्ष 15,000 रुपये ले रहा है। मद्रास निगम ने उससे नगर निगम अधिनियम 1919 की धारा 111 *(1)* (ख) के तहत वर्ष 1958-59 के लिए कर की मांग इस आधार पर की कि उसका निवास मद्रास शहर के भीतर है और उसे वह पेंशन मिल रही है जिसका वह हकदार था। अपीलार्थी ने निगम को संबोधित करते हुए एक सूचना के माध्यम से कहा कि क्योंकि निगम को प्रासंगिक संवैधानिक प्रावधानों द्वारा केवल "किसी वृत्ति, व्यापार, उद्यम या नियोजन पर"कर लगाने का अधिकार दिया गया था और चूंकि वह एक पेंशनभोगी के रूप में इनमें से किसी भी वर्ग के अंतर्गत नहीं आता था, इसलिए उक्त मांग अवैध थी। निगम ने अपीलार्थी के आधार को स्वीकार नहीं किया और इसलिए अपीलार्थी ने उच्च न्यायालय के समक्ष संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत एक रिट याचिका दायर की। उच्च न्यायालय ने अपीलार्थी की रिट याचिका को खारिज कर दिया। उच्च न्यायालय ने अपीलार्थी को उच्चतम न्यायालय में अपील दायर करने के लिए संविधान के अनुच्छेद 133 (1) (ग) के तहत एक प्रमाण पत्र प्रदान किया। इसलिए याचिका दायर की गई है।

उच्चतम न्यायालय के समक्ष प्रश्न यह था कि क्या निगम मद्रास शहर में पेंशनभोगियों द्वारा प्राप्त पेंशन के संबंध में उन पर कर लगाने का हकदार था।

धारित किया गयाः (1) कि निगम की कर लगाने की शक्ति कर के विषय के संविधान के तहत राज्य विधायी शक्ति के भीतर होने पर निर्भर है। वर्तमान शुल्क संविधान की अनुसूची VII में राज्य सूची में मद 60 के दायरे में आता है, जो इस प्रकार हैः

"किसी वृत्ति, व्यापार, उद्यम या नियोजन पर कर "

एक "पेंशनभोगी"होना एक "वृत्ति, व्यापार, उद्यम या नियोजन"नहीं हो सकता है, और न ही किसी व्यक्ति पर कर क्योंकि वह पेंशन की प्राप्ति में है, उसे "नियोजन"पर कर कहा जा सकता है। इसलिए, धारा 111 (1) (ख) के अंतिम भाग के तहत का पठन-"किसी भी पेंशन या निवेश से आय की प्राप्ति में"व्यक्तियों पर वृत्ति कर-संघ सूची की प्रविष्टि 82 के भीतर आने वाली आय पर कर के अलावा और कुछ नहीं है। मद 60 में निर्दिष्ट कर एक वृत्ति, व्यापार इत्यादि के संचालन पर कर हैं, अैार इसलिए केवल वर्तमान नियोजन के मामले में लागू होगा। केवल इस तथ्य से कि एक व्यक्ति पहले एक वृत्ति में रहा है या व्यापार आदि चला रहा था, इस प्रविष्टि के तहत कर को उचित नहीं ठहरा सकते हैं। पेंशन की प्राप्ति या निवेश से होने वाली आय पर कर जिसका उल्लेख धारा 111 (1) के अंतिम भाग में किया गया है सत्य एवं सार में आय पर कर है। जिस समय कर लगाया गया, उस समय अपीलार्थी-याची कोई नियोजन में नहीं बल्कि केवल आय की प्राप्ति में है।

(ii) कर के वर्तमान अधिरोपण को संविधान अनुच्छेद 277 द्वारा बचाया नहीं जा सकता है क्योंकि कर एक नया अधिरोपण था और उस कर की निरंतरता नहीं थी जो 1 अप्रैल, 1937 से ठीक पहले लगाया गया था। इस मामले के तथ्यों पर यह अभिनिर्धारित किया गया था कि यदि 1919 के अधिनियम द्वारा पेंशनभोगियों पर लगाए

गए वृत्ति कर के वैधानिक प्रभार को 1936 के अधिनियम द्वारा हटा दिया गया था, और कर फिर से 1 अप्रैल, 1937 को ही लागू हुआ था, तो यह होगा कि भारत सरकार अधिनियम, 1935 के भाग III के प्रारंभ से तुरंत पहले कोई "कर का अधिरोपण"नहीं था, ताकि इसे इस अधिनियम की धारा 143(2) की व्यावर्ती के दायरे में लाया जा सके। इसके अलावा, दो परिस्थितियाँ, अर्थात्, एक निर्दिष्ट अवधि के लिए शहर के भीतर निवास, कर के दायित्व की एक शर्त थी, साथ ही दरों में वृद्धि दोनों इस बात पर जोर देने का काम करेंगी कि कर अधिरोपण एक भिन्न स्वरूप में नया था, और कर की निरंतरता नहीं थी जो 1 अप्रैल, 1937 से ठीक पहले लागू था।

(iii) केवल इस तथ्य से कि 1 अप्रैल, 1937 से पहले निगम के पास 1936 के अधिनियम के तहत कर को एक संकल्प से लागू करने की शक्ति थी धारा 143 (2) के समुचित निर्वचन से इसे उन करों या शुल्कों की सीमा के अंतर्गत नहीं लाया जा सकता है जो भारत सरकार अधिनियम 1935 के भाग III के प्रारंभ से पहले "विधिक रूप से लगाए जा रहे थे", जिन्हें केवल इस बात के बावजूद लगाए जाने की अनुमति है कि ये शुल्क संघीय विधायी सूची में थे। कर को लागू करने की शक्ति के मात्र अस्तित्व को भारत सरकार अधिनियम, 1935 के भाग III से पहले "विधिक रूप से लगाए जा रहे कर"के तुल्य नहीं माना जा सकता है।

उच्च न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित करने में गलती की कि भारत सरकार अधिनियम की धारा 292 इस मामले में लागू होती है।

नगर नगरपालिका समिति, अमरावती बनाम रामचंद्र वासुदेव चिमोटे, [1964] 6 एस. सी. आर. 947, दक्षिण भारत निगम (प्रा.) लिमिटेड बनाम सचिव, राजस्व मंडल, त्रिवेंद्रम, ए. आई. आर. 1964 एस. सी. 207, में विश्वास व्यक्त किया।

(iv) धारा 111 (1) यथा संशोधित के अंतर्गत कर केवल अनुसूची IV के नियमों के अनुसार लगाया जा सकता था और चूंकि उन नियमों में पेंशनभोगियों पर

कर लगाने का प्रावधान नहीं था, इसलिए यह होगा कि कर उन पर "विधिक रूप से नहीं लगाया जा रहा था"। उच्च न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित करने में गलती की कि इस तरह के दोष को मद्रास सामान्य खंड अधिनियम की धारा 18 द्वारा दूर कर दिया जाएगा।

(v) भारत सरकार अधिनियम, 1935 की धारा 142-क (1) प्रत्यर्थी के मामले में तभी सहायता करेगी जब लगाया गया कर किसी वृत्ति, व्यापार, उद्यम या नियोजन पर हो। वर्तमान मामले में, कर पेंशनभोगी की आय पर अधिरोपित किया जा रहा है और इसलिए यह प्रावधान लागू नहीं होता है। संसद का इरादा यह नहीं है कि राज्य आय पर कर लगाए और इसे "वृत्ति"कर कहें।

सिविल अपीलीय क्षेत्राधिकारः सिविल अपील सं. 1962 की 580

मद्रास उच्च न्यायालय के रिट याचिका संख्या 1959 की 975 के निर्णय और डिक्री दिनांक 1 मई 1961 से अपील।

आर. एम. शेषाद्री और आर. गोपालकृष्णन अपीलार्थी की ओर से।

आर. गणपति अय्यर, प्रत्यर्थी संख्या 1 ओर से।

ए. रंगनाधम चेट्टी और ए. वी. रंगम, प्रत्यर्थी संख्या 2 ओर से

3 मार्च, 1964। न्यायालय का निर्णय दिया गया

द्वारा आयंगर,न्यायमूर्ती - यह अपील हमारे समक्ष, अपीलार्थी द्वारा वृत्ति कर का भुगतान करने के सूचना पत्र की संवैधानिक वैद्यता को चुनौती देकर मद्रास निगम के विरूद्ध प्रतिषेध रिट जारी करवाना चाहते हुए संविधान के अनुच्छेद 226 के अंतर्गत दायर याचिका को खारिज किए जाने के मद्रास उच्च न्यायालय के निर्णय के विरूद्ध संविधान के अनुच्छेद 133 (1) (ग) के तहत योग्यता प्रमाण पत्र प्रदान किया जाने पर दायर की गई है।

अपीलार्थी ने भारत के अंतिम गवर्नर-जनरल के रूप में पद संभाला। अपीलार्थी 1951 के केंद्रीय अधिनियम XXX की धारा 3 के तहत 15,000 / - रुपये प्रति वर्ष की पेंशन का हकदार और मद्रास शहर में रहते हुए यह राशि प्रप्त कर रहा है। मद्रास निगम-जो हमारे समक्ष प्रथम प्रत्यर्थी है नगर निगम अधिनियम, 1919 जिसे एतष्मिन पश्चात अधिनियम कहा गया है की धारा 111 (1)(ख) के तहत अपीलार्थी से वर्ष 1958-1959 के लिए वृत्ति कर की मांग उसमें विर्निष्ट अवधि के लिए शहर के भीतर अपीलार्थी के निवास एवं उसके द्वारा पेंशन, जिसका कि वह हकदार था प्राप्त करने के आधार पर की गई। अपीलार्थी ने निगम को एक सूचना संबोधित करते हुए जोर दिया कि क्योंकि निगम को प्रासंगिक संवैधानिक प्रावधानों द्वारा केवल "किसी वृत्ति, व्यापार, उद्यम या नियोजन पर"कर लगाने का अधिकार दिया गया था और चूंकि वह एक पेंशनभोगी के रूप में इनमें से किसी भी वर्ग के अंतर्गत नहीं आता था, इसलिए उक्त मांग अवैध थी। निगम के प्राधिकारियों ने यद्यपि अधिनियम की स्पष्ट शर्तों में पेंशनभोगी व्यक्ति के भी कर के लिए दायित्वाधीन होने के आधार पर मांग की पालना पर जोर दिया। इसलिए अपीलार्थी ने उच्च न्यायालय के समक्ष संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत एक रिट याचिका पूर्व में अभिव्यक्त अनुतोष हेतु दायर की तथा चूंकि राज्य अधिनियम की वैधता प्रश्नगत थी अतः मद्रास राज्य को भी प्रत्यर्थी के रूप में संयोजित किया गया।

यह आगे बढने से देखा जाएगा कि विचार के लिए प्रश्न यह है कि क्या प्रथम प्रत्यर्थी निगम पेंशनभोगियों पर उनके द्वारा प्राप्त की जा रही पेंशन के संबंध में कर लगाने का हकदार था।

अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता द्वारा हमें दी गई प्रस्तुतियाें पर विचार करने के लिए मद्रास शहर के लिए लागू पेंशन की प्राप्ति में व्यक्ति पर वृत्ति कर और प्रश्नगत कर के संबंध में कानून के इतिहास को निर्धारित करना आवश्यक होगा क्योंकि यह इन प्रावधानों के निर्वचन से ही उच्च न्यायालय के विद्वान न्यायाधीशों ने कर अधिरोपण की

वैद्यता को बरकरार रखा है और अपीलार्थी की रिट याचिका को खारिज किया है इस उददेश्य से यह आवश्यक नहीं है कि नगरपालिका अधिनियम (1919 का मद्रास अधिनियम IV) के अधिनियमित होने के पहले की स्थिति पर जाएं जो कि कुछ संशोधन के साथ संदर्भित किया गया है आज भी प्रर्वतन में है । इस अधिनियम को राज्यपाल की स्वीकृति 26 मार्च, 1919 को, गवर्नर-जनरल की स्वीकृति जून, 1919 में मिली और राजपत्र में प्रकाशन के बाद प्रभाव में उसी महीने में आया। अधिनियमित कर लिये जाने के दौरान स्थानीय विधायिका की शक्ति भारत सरकार अधिनियम 1915 के द्वारा शासित थी, अधिनियम की वैधता पर कोई प्रश्न नहीं किया जा सकता है। इस अधिनियम की धारा 111 (1) कहती हैः-

> "कोई व्यक्ति शहर के अन्दर कंपनियों के कर के लिए उत्तरदायी नहीं है, उस अवधि के लिए जेैसा की धारा 113 में बताया गया है जो कि एक वृत्ति, कौशल, व्यापार या उद्वम करता है या सार्वजनिक या निजी नियुक्ति रखता है, जो व्यक्तियों के एक या अधिक वर्गों को अन्दर लाने पर जिसका कर नियमों में विवरण अनुसूची IV में किया गया है,एक कर जैसा कि उक्त नियमों के तहत निर्धारित किया गया है, अनुज्ञप्ति शुल्क के रूप में भुगतान करेगा और इसके अलावा दुसरा अनुज्ञप्ति शुल्क जो कि अधिनियम के अन्तर्गत एक कर के रूप में उक्त नियमों में निर्धारित किया जाता है अधिरोपित किया जा सकेगा, परन्तु किसी भी मामले में छमाही में पांच सौ रुपये से अधिक नहीं होगा और ऐसे कर को वृत्ति कर के रूप में वर्णित किया जा सकेगा।

इस धारा में दो स्पष्टीकरण दिये गये है जिसमें दुसरा सारवान है और यह कहता हैः

स्पष्टीकरण 2:

"किसी भी स्रोत से एक पेंशन प्राप्त करने वाले व्यक्ति के संबंध में यह माना जायेगा कि वह इस धारा के अन्तर्गत नियुक्ति रखता है "।

संबंधित प्रावधान में अगला बदलाव मद्रास शहर नगर पालिका संशोधन अधिनियम, 1936 (मद्रास 1936 का अधिनियम X) द्वारा किया गया, जो 14 अप्रैल 1936 को प्रवर्तना में आया। इस संशोधन द्वारा पुराने की जगह पर एक नई धारा 111 प्रतिस्थापित की गई थी, जिसे अभी बताया गया , और इसके द्वारा स्पष्टीकरण (2) को विलोपित कर दिया गया और प्रतिस्थापित प्रावधान कहता हैः

"111 (1) यदि परिषद एक प्रस्ताव द्वारा निर्धारित करती है कि वृत्ति कर लगाया जाना चाहिए, हर व्यक्ति कंपनियों पर लगाये गये टैक्स के लिए उत्तरदायी नहीं होगा, जो कि धारा 98 – क की उप-धारा (2) के तहत प्रकाशित सूचना में विनिर्दिष्ट तिथि के बाद किसी आधे वर्ष के लिए -

(क) कोई वृत्ति, कौशल या उद्यम या व्यवसाय करता है और कोई सार्वजनिक या निजी नियुक्ति रखता है-

(i) शहर में कुल मिलाकर साठ दिन से कम के लिए नहीं , या

(ii) शहर के बाहर किंतु जो शहर में कुल मिलाकर साठ दिन से कम के लिए नहीं रहता है; या

(ख) जो शहर में कुल मिलाकर साठ दिन से कम के लिए नहीं रहता है और किसी भी पेंशन या निवेश से आय की प्राप्ति में है, किसी भी अनुज्ञप्ति शुल्क के अतिरिक्त भुगतान जो इस अधिनियम के तहत अधिरोपित किया जा सकेगा, अनुसूची IV में के नियमों के अनुसार निर्धारित अर्द्धवार्षिक कर के रूप में जो किसी भी मामले में पांच सौ रूपये अधिक नहीं करेगा।

इसके साथ एक नयी धारा - 98 - क जोडी गयी थी जो कहती हैः

धारा 98 - (1):

"परिषद द्वारा पहली बार कर या शुल्क अधिरोपित करने वाला कोई भी प्रस्ताव पारित करने से पहले वह आयुक्त को फोर्ट सेंट जॉर्ज राजपत्र में और स्थानीय समाचार पत्रों में इसके आशय की सूचना प्रकाशित करने को निर्देशित करेगी और एक उचित अवधि, जो फोर्ट सेंट जॉर्ज राजपत्र में ऐसी सूचना के प्रकाशन की तारीख से एक महीने से कम न हो, आपत्तियाँ प्रस्तुत करने के लिए तय करेगी। परिषद, निर्दिष्ट अवधि के भीतर प्राप्त आपत्तियों, यदि कोई हों, पर विचार करने के बाद, कर या शुल्क लगाने को संकल्प द्वारा निर्धारित कर सकती है। ऐसा संकल्प उस दर को निर्दिष्ट करेगा जिस पर, उस तारीख से और शुल्क की अवधि, यदि कोई हो, जिसके लिए ऐसा कर या शुल्क लगाया जाएगा।

(2) जब परिषद पहली बार या नई दर पर कोई कर या शुल्क लगाने का निर्धारण कर लेती है, तो आयुक्त तुरंत उप-धारा (1) में निर्धारित तरीके से एक सूचना प्रकाशित करेगा, जिसमें उस तारीख को निर्दिष्ट किया जाएगा जिस पर वह दर और शुल्क लगाने की अवधि, यदि कोई हो, जिसके लिए ऐसा कर या शुल्क लगाया जाएगा।

इस स्तर पर अनुसूची IV का उल्लेख करना आवश्यक है जिसके अनुसार कर का निर्धारण उसकी धारा 111 (1) की शर्तों के तहत किया जाता है। 1919 में अधिनियमित इस अधिनियम में अनुसूची IV में सुसंगत नियम ने व्यवसाय कर आदि के लिए निर्धारित व्यक्तियों को 8 वर्गों में विभाजित किया, जो नियुक्ति व्यक्ति को प्राप्त मासिक वेतन की राशि और व्यापार, कौशल, उद्यम से अर्जित आय पर आधारित है । फिर से इनमें वर्णित वर्गों को दो उप-वर्गों में विभाजित किया गया-पहला उप-वर्ग जिसमें "मासिक वेतन के आधार पर नियुक्तियां रखने वाले व्यक्ति"और दुसरा "किसी भी वृत्ति, व्यापार, कौशल, उद्यम करने वाले व्यक्ति या; व्यवसाय करने वाले"शामिल हैं। यह देखा जाएगा कि धारा 111का स्पष्टीकरण 2, जैसा कि यह 1919 में था, जो कि 1936

का अधिनियम X के द्वारा संशोधन से पहले का प्रावधान था , जिसमें यह अधिनियमित किया था कि "पेंशन प्राप्त करने वाले व्यक्ति""नियुक्तियाँ रखने वाले व्यक्ति"समझे जाएगें, जहां अनुसूची IV में वर्णित नियम का संदर्भ "नियुक्तियाँ रखने वाले व्यक्तियों"से है, यह एक वैधानिक परिकल्पना है- ऐसे पेंशनभोगी जो कि पेंशन की राशि के आधार पर विभिन्न वर्गों में "नियुक्तियाँ रखने वाले व्यक्ति"के रूप में वर्गीकृत थे । लेकिन जब यह धारा 111 के स्पष्टीकरण को 1936 के संशोधन अधिनियम X द्वारा हटा दिया गया और जब नयी धारा 111 (1) (ख) अनुसूची IV के हिसाब से अर्ध-वार्षिक कर को संदर्भित करती है, ऐसा कहा गया था कि पेंशनभोगी व्यक्तियों का कर निर्धारण नहीं किया जा सकता है जब तक कि उन्हें नियुक्तियाँ रखने वाले व्यक्तियों या किसी भी वृत्ति, व्यापार, या कौशल या उद्यम "की श्रेणी के अन्दर नहीं रखा जायेगा, क्योंकि यह एकमात्र वर्ग है, जो वर्तमान उद्देश्य के लिए अनुसूची IV के तहत नियमों के दायरे के लिए प्रासंगिक हैं ।

हम अनुसूची IV में प्रयुक्त शब्दावली को उचित स्थान पर उसकी विशेषतओं के आधार पर दिये गये तर्क पर विचार करेंगे। मद्रास निगम स्वयं ने धारा 98 - क के प्रावधानों को लिया है और इसके द्वारा विहित सूचना पत्र जारी किये जाने के बाद 31 मार्च 1937 को एक बैठक में जिसमें वर्ष 1937-38 के लिए अन्य के अलावा "वृति कर"लगाये जाने का एक प्रस्ताव पारित किया, जो दर प्रस्ताव में वर्णित थी। "वृति कर"के संबंध में, प्रस्ताव कहता हैः

> "यह संकल्पित किया गया कि वाक्यांश 1,2,3,4,5 और 6 के संबंध में वृति कर उच्चतम दर पर निर्धारित की जायेगी और यह अनुसूची IV में वर्णित वाक्यांश 7,8 और 9 की न्यूनतम दरों से 25 प्रतिशत ज्यादा होगी।"

इस संकल्प ने आगे बताया गया कि उसमें निर्धारित दरों पर कर, पहले जो लागू थी से अधिक थी, 1 अप्रैल, 1937 से प्रभावी होगा। बावजुद पेंशनभोगियों वृत्ति कर के निर्धारण हेतु अनुच्छेद 4 में वर्णित नियम स्पष्टतः लागू नहीं होने के निगम ने उक्त कर का निर्धारण करना जारी रखा और उसे एकत्रित किया । अधिनियम में यह खामी 1942 में स्पष्ट रूप देखी गई जब अधिनियम की धारा 347 (3) के अनुसार सरकार को दी गई शक्ति के प्रयोग से आधिकारिक राजपत्र में एक अधिसूचना द्वारा अनुसूची के संशोधन किया गया । इस संशोधन के अंतर्गत, "कोई नियुक्तिधारी या वृत्ति, व्यापार अथवा उद्यम इत्यादि कर्ता व्यक्ति की जगह पर "धारा 111 (1) में वर्णित व्यक्तियों द्वारा अर्धवार्षिक आय प्राप्ति के आधार पर वर्ग में विभाजन किया गया था।"अनुसूची का यह संशोधन 1 अप्रैल, 1942 से प्रभाव में आना निर्देशित किया गया था। अनुसूची IV की वर्णित शर्त अब तक उसी तरह 1942 से लागु है- केवल कर की दरों मे उत्तोरत्तर वृद्धि हुई है ; पहली बार 1950 में, फिर 1958 में और फिर 1961 में, लेकिन अपीलार्थी द्वारा उठाये गये मुख्य तर्क के आलोक में हमारे लिये यह आवश्यक नहीं है कि हम इस वृद्धि का वर्णन या पर विचार करें

यहाँ रुकते हुए हम संक्षेप में जिस आधार पर निगम द्वारा आपेक्षित वृति कर की मांग की गई, संक्षेप में वर्णित किया जा सकता है । निगम की कर लगाने की शक्ति कर के विषय के संविधान के तहत राज्य विधायी शक्ति के भीतर होने पर निर्भर है। विधायिक सूची की संबंधित प्रविष्टि जिसमें सिर्फ राज्य को कर लगाने का अधिकार है, संभवतया, वर्तमान कर निर्धारण जिससे समर्थित हो सकता था संविधान की राज्य सूची की अनुसूची VII के मद 60 था, कहती है :

"वृत्ति, व्यापार, उद्यम, और नियोजन पर कर "

"पेंशनभोगी"होना न तो एक "वृत्ति, व्यापार, व्यवसाय या उद्यम"हो सकता है, और न ही किसी व्यक्ति पर कर इसलिए हो सकता क्योंकि उससे जो पेंशन मिल रही

है, उसे "नियोजन"पर कर कहा जा सके। अतः धारा 111 (1) (ख) के अंतिम भाग के अनुसार-किसी व्यक्ति "जिसे पेंशन मिलती है या निवेश से आय है पर लगाया गया वृति कर"संघ सूची की प्रविष्टि 82 के अंतर्गत आय पर कर के अलावा कुछ नहीं है। यदि इसलिए, निगम इस कर को राज्य विधायी शक्ति के अन्दर उचित नहीं ठहरा सकता है तो यह सिर्फ संविधान के अनुच्छेद 277 के संदर्भ से यह हो सकता है जिसके द्वारा "कर, शुल्क, आदि"जो कि संविधान को लागू होने से पहले "कानूनी रुप से लगाये गए"की अनुमति "बावजूद इसके कि वह कर संघ सूची में था"और पूर्व के "समान उद्देश्य "से लागू होगा । इसलिए जब तक कि निगम यह नही बता पाता है कि अब आक्षेपित कर कानूनी रूप से संविधान से पहले लगाया जा रहा था ऐसा लगाया जाना अवैध होगा और साथ ही साथ कर की पूर्व् में बताई गई दरों में अप्रैल,1950, अप्रैल 1958 और 1961 की वृद्धि से जटिलता प्रस्तावित हुई थी। अभी क्षणभर के लिए दर में वृद्धि के प्रभाव के प्रश्न को अलग छोड़कर हमें देखना होगा कि क्या शुल्क निगम द्वारा कानूनी रुप से संविधान से पहले आधिरोपित किया गया, यह स्थापित हो गया है ।

इस प्रश्न का उत्तर कि 26 जनवरी, 1950 से पहले जब संविधान प्रभाव में आया था, क्या यह "कानूनी रूप से अधिरोपित था", भारत सरकार अधिनियम, 1935 के कुछ प्रावधानों के प्रभाव पर निर्भर होगा । उस अधिनियम के अन्तर्गत, जैसा कि संविधान के अन्तर्गत है, वर्तमान विवादग्रस्त प्रकृति के करों के संबंध में राज्य की विधायी शक्ति संविधान में राज्य सूची की प्रविष्टि 60 में नियोजित निर्बंधों के समान थी । भारत सरकार अधिनियम, 1935 के अन्तर्गत प्रांतीय विधायी सूची में प्रविष्टि 46 इस प्रकार हैः

"वृत्ति, व्यापार, उद्यम और नियोजन पर कर":

और "आय पर कर"लगाने की संघ की शक्ति पूर्णरूप से सूची । की प्रविष्टि 54 के अंतर्गत आती हैं। आंग्ल् बर्मी विविध प्रावधान अधिनियम, 1940 के द्वारा अंग्रेजी

संसद ने धारा 42क अधिनियमित की जिसकी शर्तों पर हम बाद में विचार करेंगे और उसी अधिनियम के द्वारा प्रविष्टि 46 में संशोधन किया गया, और जिसके शब्द हैं-

"विषय, जो यद्यपि धारा 142 - क के प्रावधानों में"प्रविष्ट 46 के अंत में जोडे गये थे। यहाँ, फिर से, यह देखा गया कि यदि निगम को पेंशनर की पेंशन पर वृत्ति कर लगाने का अधिकार है तो उसे वैधानिक प्रवष्टि पर आधारित होना चाहिए था जिस पर यह विफल हो जाएगा क्योंकि यह सूची सहपठित संविधान के अनुच्छेद 246 के संबंधित उक्त् अधिनियम की धारा 100 के अंतर्गत प्रांत की विधायी शक्तियाें से बाहर था। कर निर्धारण की वैद्यता जब भारत सरकार अधिनियम लागू था अर्थात अर्थात 1अप्रैल, 1937 और 25 जनवरी, 1950 भारत सरकार अधिनियम की धारा 143 (2) की व्यावर्ति के अंतर्गत इसके आने पर निर्भर थी जो कहती हैः

“कोई भी कर, उपकर, अधिभार अथवा शुल्क जो इस अधिनियम के भाग III के लागू होने से ठीक पहले किसी भी प्रांतीय सरकार, नगर पालिका या अन्य स्थानीय प्राधिकरण या निकाय द्वारा 1 जनवरी, 1935 को लागू किसी विधि के अंतर्गत किसी प्रांत, नगर पालिका, जिला या अन्य कोई स्थानीय क्षेत्र के उददेश्य से विधिक रूप से लगाए गए थे का लगाया जाना बावजूद इसके जारी रहेगा कि वे कर, उपकर, अधिभार अथवा शुल्क जो कि संघ की सूची में वर्णित है,और वे समान उददेश्य से लागू होंगे जब तक कि संघीय विधायिका द्वारा विपरीत प्रावधान नहीं किया जावे।”

इसमें कोई संदेह नहीं है कि अप्रैल 1936 में पारित संशोधन अधिनियम 1 जनवरी 1935 को लागू नहीं था, लेकिन यह इसे धारा 143 (2) से बाहर नहीं करेगा क्योंकि भारत-बर्मा (संक्रमणकालीन प्रावधान) आदेश, 1937 जो कि महामहिम की परिषद का आदेश होने से भारत सरकार अधिनियम, की धारा 310 के द्वारा अधिकृत है,का पद 3 प्रावधान करता है किः

"पद 3 (1): भारतीय अधिनियम के भाग III के लागू होने के दो वर्ष् तक अवधि के लिए उक्त अधिनियम की धारा एक सौ तेतालिस उप-धारा(2) के प्रावधान (जो, जब तक कि संघ की विधायिका द्वारा संघीय सूची में आने वाले कतिपय प्रांतीय कर के विपरीत प्रावधान नहीं किये जाते इसकाे जारी रखना अधिकृत करते हैं) प्रभाव में रहेंगे जैसे कि 1 जनवरी, 1935 का संदर्भ तथाकथित भाग III के लागू होने के संदर्भ में था"

इसलिए, यह होगा कि वर्तमान मांग वैध रूप से माने जाने के लिए यह पर्याप्त होगा यदि ऐसा दिखाया गया कि कर भारत सरकार अधिनियम,1935 के भाग III लागू होने के ठीक पहले विधिपूर्ण अधिरोपित किया गया था, अर्थात 31 मार्च, 1937 को। उच्च न्यायालय के विद्वान न्यायाधीश ने यह अभिनिर्धारित किया कि यह शर्त पूरी हो गयी थी और इस आधार पर उन्होंने अपीलार्थी की याचिका खारिज कर दी।

अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता ने चार बिंदु अपने अपील के समर्थन में प्रस्तुत किए हैंः (1) कि 1936 का X संशोधित अधिनियम विधिक रूप से पारित नहीं पारित नहीं किया गया था क्योंकि यह भारत सरकार अधिनियम, 1919 की धारा 45-क के तहत बनाए गए अधिकार हस्तानांतरण नियम के विपरीत था जिसके द्वारा स्थानीय सरकारों को अन्य चीजों के अलावा वृत्ति, व्यापार आदि पर कर लगाने की विधायी शक्ति दी गई थी, यह वास्तव में "आय पर कर"है, जो कि केंद्रीय विषय था, स्थानीय विधायिका के शक्ति से बाहर था, (2) यह मान भी लिया जाए कि 1936 का X अधिनियम वैध था, इसके अंदर जो कर लगाने की अनुमति थी, धारा 111 (1) के प्रावधानों को ध्यान में रखने पर एक नया कर है जो कि पहली बार निगम द्वारा केवल संकल्प के जरिए 1 अप्रैल, 1937 को व से लगाया गया है और इसलिए, वर्तमान कर भारत सरकार अधिनियम, 1935 के भाग III के लागू होने से पहले लागू नहीं था और इसलिए यह अधिनियम की धारा 143 (2) के द्वारा व्यावर्तित नहीं था, (3) इसके

अलावा, 1 अप्रैल, 1937 से 1 अप्रैल, 1942 के बीच इसे विधिक रूप से अधिरोपित नहीं गया था क्योंकि अनुसूची IV के नियमों के शब्दों के कमी पैदा करने के कारण पेंशनभोगियों पर कर लगाए जाने को लागू होने योग्य नहीं था, (4) धारा 143 (2) या अनुच्छेद 277 के अधीन 1937 के बाद दरों में वृद्धि को उचित नहीं ठहराया जा सकता और कर की दरों में इस परिवर्तन के कारण वस्तुतः यह एक एक नया कर हो गया और इस वृद्धी के बाद किसी भी सीमा तक विधिक रूप से अधिरोपित किया जाना जारी नहीं रखा जा सकता।

पहला बिंदु पर हमें लंबे समय तक रूकने की आवश्यकता नहीं है। प्रथम दृष्टया ऐसा प्रतीत होता है कि विधायिक शक्तियों का संघ व स्थानीय सरकारों के मध्य भारत सरकार अधिनियम, 1919 में कोई कठोर बंटवारा नहीं .होने से ऐसे नियमों का कोई उल्लंघन जो धारा 45 - क के अंतर्गत बनाए गए हस्तांतरण नियमों भारत सरकार अधिनियम, 1919 की धारा 80 - क (3) व 84 (2) के द्वारा विधिमान्य किया जाएगा। उच्च न्यायालय के विद्वान न्यायाधीशों द्वारा जिनके समक्ष यह तर्क दिया गया था खारिज कर दिया, और विद्वान अधिवक्ता ने यह कहा कि इस बिंदु पर निर्णय सही नहीं था। किंतु हमने दूसरे दिए गए तर्कों को लिया है, इस परिपेक्ष्य में हमने इस बिंदु पर विद्वान अधिविक्ता को पूरी तरह नहीं सुना इसलिए उनके इस तर्क की तर्कसंगतता पर कोई अपना अंतिम विचार नहीं व्यक्त करना चाहते हैं ।

दूसरे बिंदु पर विचार करने के लिए प्रारंभिक रूप से 1936 के संशोधन अधिनियम के द्वारा कर लगाने के संबंध में प्रभावी किये गये परिवर्तन की एक विशेषता विचार करना आवश्यक होगा। धारा 111,के अंतर्गत जैसी कि यह मूल रूप से थी, कर का भुगतान करने का दायित्व, यानी, कर के लिए प्रभार , क़ानून ही के आधार पर ही उन व्यक्तियों पर लगाया गया था, जो निर्धारित अवधि के लिए "किसी वृत्ति, व्यापार या उद्यम करते थे या नियुक्ति रखते थे", पेंशन प्राप्त करने वाले व्यक्तियों को नियुक्तियाँ प्राप्त करने वाला व्यक्ति माना गया। इस संरचना को दायित्व लगाये जाने के संबंध में

संशोधन अधिनियमद्वारा बदल दिया गया था। प्रावधान के तहत, जो कि पुनर्रचना है, कर के भुगतान करने का दायित्व उत्पन्न होने से पहले परिषद को एक संकल्प द्वारा यह निर्धारित करना होगा कि वृति कर लगाया जाएगा और केवल ऐसे संकल्प के द्वारा ही शुल्क प्रभार को लागू किया जा सकता था। इस प्रकार, परिषद के संकल्प को विधि ही के स्थान पर उस तरीके के रूप में प्रतिस्थापित किया गया जिसके द्वारा शुल्क लगाया जाना था। एक दूसरे तरह का परिवर्तन द्वारा शहर में पेंशन की प्राप्ति के अलावा, शहर में छह महीने के लिए निवास करना, वृति कर लगाए जाने के लिए आवश्यक तत्व पुरःस्थापित किया गया था। इन दो परिवर्तनों के प्रभाव पर अब विचार करने की आवश्यकता है। 1935 के अधिनियम के द्वारा धारा 111 में जो संशोधन किया गया है जो अप्रैल 1936 में प्रभाव में आया, से मद्रास शहर में रहने वाले पेंशन प्राप्त करने वाले व्यक्तियों पर लगाए गए कर पर प्रभार के वैधानिक अधिरोपण को समाप्त कर दिया गया, और उस तारीख के बाद की अवधि के संबंध में कर का दायित्व धारा 111 (1) के संशोधित प्रावधानों के अनुसार परिषद द्वारा पारित संकल्प पर निर्भर था। इस संबंध में यह इंगित करना होगा कि धारा 98-क द्वारा निर्धारित पूर्व प्रकाशन आदि के संबंध में प्रक्रिया अपनाई जाना, केवल नया कर लगाए जाने के मामले में आवश्यक थी और जो इस प्रकरण में भी अपनायी जा सकती थी क्योंकि दरों में वृद्धि की गई थी, फिर भी, कर लगाने के लिए परिषद का एक संकल्प आवश्यक था क्योंकि इसके बिनाकोई वृति कर का दायित्व उत्पन्न नही होगा। परिषद के संकल्प के द्वारा कर का प्रभार लगाया गया, जैसा कि हमने पहले कहा है, जो 1 अप्रैल, 1937 से प्रभावी होना था। दूसरे शब्दों में, मूल धारा 111 के निरसन के कारण, पेंशन पर कर का वैधानिक प्रभार अप्रैल 1936,से समाप्त हो गया। परिषद के संकल्प के तहत 1 अप्रैल,1937 से प्रभावी एक प्रभार फिर से लगाया गया, कि अप्रैल 1936 से 31 मार्च 1937 के बीच किसी भी कानून के आधार पर कोई भी प्रभार नहीं लगाया गयाथा। अपीलकर्ता के विद्वान वकील का कहना है कि यह वास्तव में एक नया अधिरोपण् है - एक कर का एक अधिरोपण

जो31 मार्च, 1937 को कानूनी रूप से अस्तित्व में नही था, और यदि इस अधिरोपण का समर्थन जैसा कि भारत सरकार के अधिनियम, 1935 की धारा 143(2) के तहत स्वीकृत किया जा रहा है नही किया जा सकता है, यह सामान्य आधार है कि अधिरोपण की वैधानिकता को बरकरार नहीं रखा जा सकता है। हम इस निवेदन को अच्छी तरह से स्थापित मानते हैं। यदि 1919 के अधिनियम द्वारा पेंशनभोगियों पर लगाया गया वृति कर पर वैधानिक प्रभार 1936 के अधिनियम द्वारा हटा दिया गयाथा, और ऐसा कर केवल 1 अप्रैल, 1937 को पुनः प्रवर्तनमें आया, इसका यह अर्थ है कि "भारत सरकार अधिनियम, 1935 के भाग III के प्रारंभसे "ठीक पहले", "कर का कोई अधिरोपण नहीं था"ताकि इसे इस अधिनियम की धारा 143(2) की व्यावृतिके अन्दर लाया जा सके। इसके अलावा, दो परिस्थितियाँ अर्थात : एक निर्दिष्ट अवधि के लिए शहर के अन्दर निवास को कर के दायित्व की शर्त बना दिया गया, साथ ही साथ दरों में वृद्धि दोनों इस बात पर जोर देते है कि अधिरोपण एक नये प्रकार का, एक अलग बनावट के साथ था और जो1 अप्रैल, 1937 के ठीक पहले अधिरोपित कर की निरंतरता में नहीं था।

उत्तरदाताओंमद्रास निगम और राज्य के विद्वान वकील ने अर्ज किया है कि यह वास्तव में पुराना अधिरोपण था । हम सहमत नहीं हो पा रहे हैं। केवल यह तथ्य कि 1 अप्रैल 1937 से पहले निगम के पास 1936 के अधिनियम X के तहत एक प्रस्ताव द्वारा कर को लागू करने की शक्ति थी, इसे धारा 143(2) के उचित निर्वचन से उन करो अथवा शुल्कों की श्रेणी में नही रखे जा सकते, जो भारत सरकार अधिनियम के भाग III के प्रारम्भ होने से पहले "विधिक रूप से अधिरोपित थे"जो केवल जिन शुल्कों के संघीय विधायिका सूची में आने के बाबजुद लगाए जाना बरक़रार रहने को अनुमत है।इस प्रश्न पर हमने टाउन म्यूनिसिपल कमेटी, अमरावती बनाम राम चंद्र वासुदेव चिमोटे और अन्य, आदि ([1]) में बहुत विस्तार से विचार किया है, जिसमें आज फैसला सुनाया गया है और इसकी दोबारा विचार किया जाना अनावश्यक है। केवल किसी कर को अमल में

लाने की शक्ति की जैसा कि बताया गया है एक कर जो विधिपूर्ण अधिरोपित किया गया है से बराबरी नही की जा सकती जो कि विधिक रुप से भारत .सरकार के अधिनियम, 1935 के भाग III से पहले विधिक रुप से अधिरोपित थी ।

अपीलकर्ता के विद्वान वकील की तीसरी दलील भी अच्छी तरह से स्थापित है। 1936 के अधिनियम X की धारा 111 में संशोधन के प्रभाव और परिषद के संकल्प द्वारा 1 अप्रैल 1937 से लगाया गया कर, वह कर नही होने से जो 1 अप्रैल 1942 से ठीक पहले कानूनी रुप से लगाया जा रहा था, निष्कर्ष जिस हम पर पहुंचे है, अनुसूची IV के नियमो से और भी सुदृढ हो जाता है, जो 1942 तक असंशोधित थे। धारा 111(1[1]),यथा संशोधित के अंतर्गत कर केवल अनुसूची IV के नियमों के अनुसार लगाया जा सकता है और ऐसे नियम पेंशनभोगियों पर कर लगाने का प्रावधान नहीं करते है, इसका यह अर्थ है कि वह कर उन पर "कानूनी रूप से अधिरोपित नहीं किया जा रहा था"। जैसा कि पहले ही बताया गया है, उस अनुसूची में प्रासंगिक नियम उस समय बनाए गए थे जब स्पष्टीकरण 2 धारा 111 का हिस्सा थाऔर "पेंशनधारियों"को "नियुक्तियाँ धारणकरने

वाला"माना गया था। स्पष्टीकरण को हटाने के साथ, 1919 के मूल मद्रास अधिनियम IV द्वारा बनाई गई धारणा समाप्त कर दी गई और उसके बाद यदि अनुसूची IV के नियमों को उन पर लागू किया जाना था तो उन्हें उपयुक्त रूप से संशोधित करना था। यह, जैसा कि हमने पहले बताया है, केवल 1 अप्रैल, 1942 से किया गया था, ताकि वास्तव में पेंशनभोगियों पर कर 1936 तक "वैध रूप से"लगाया जा सके और फिर 1 अप्रैल, 1942 से विराम के बाद, हम "वैध रूप से"शब्द का उपयोग इस उपधारणा से करते हैं कि भारत सरकार अधिनियम, 1935 के द्वारा इसे वैध रुप से किया जा सकता था, जैसा कि इस बिन्दु पर हम पहले ही चर्चा कर चुके है। उच्च न्यायालय के विद्वान न्यायाधीशों ने इस शीर्ष के तहत उन्हें संबोधित तर्क को मद्रास सामान्य खण्ड अधिनियम की धारा 18 के जो कि सामान्य खंड अधिनियम (1897 का

1(1) (1964) 6 एस.सी.आर.947.

केंद्रीय अधिनियम X) की धारा 24 के जैसी है, के सन्दर्भ से खारिज कर दिया हैं। विद्वान न्यायाधीशों के प्रति अत्यंत सम्मान के साथ हम यह नहीं पाते कि यह प्रावधान कैसे इस प्रकरण में कोई मदद करता है। अनुसूची और नियम बिना किसी निरसन या संशोधन के लागू थे जब 1936 में नई धारा 111 (1) के प्रस्थापित की गयी थी, और जब इस धारा ने अनुसूची IV में नियमों का संदर्भ दिया यह केवल अनुसूची IV में नियमों का संदर्भ हो सकता है जो अपरिवर्तित थे। यदि अनुसूची में प्रयुक्त पदावली ऐसे वर्ग के लिए अनुपयुक्त थी जो कि धारा 111(1)के अंतर्गत आते है,तो इसका केवल यही प्रभाव होगा कि कर अधिरोपित नहीं किया जा सकता, क्योंकि कर लगाने वाला कानून दोषपूर्ण था, लेकिन ऐसी स्थिति का समाधानसामान्य खंड अधिनियम के सन्दर्भ से नहीं किया गया है, जिस पर विद्वान न्यायाधीशों ने भरोसा किया है।

इसलिए, यदि 1 अप्रैल, 1937 से ठीक पहले कानूनी रूप से कर नहीं लगाया गया था और भारत सरकार अधिनियम, 1935 के लागू होने के बाद लाया गया था और वास्तव में केवल 1 अप्रैल, 1942 से इसे वैध मानते हुए-यह स्पष्ट है कि इस कर की वैधता को धारा 143 (2) के तहत पूर्व-मौजूदा वैध शुल्क की निरंतरता के रूप में कायम नहीं रखा जा सकता है।

इस दृष्टि से विद्वान अधिवक्ता द्वारा आग्रह किए गए अंतिम बिंदुओं पर विचार करना आवश्यक नहीं है और यह जांचना कि क्या दर में वृद्धि के मामले में संपूर्ण कर एक नया कर बन जाएगा और इसलिए असंवैधानिक है या क्या यह केवल दर में वृद्धि है तो वह अप्रवर्तनीय हो जाएगा।

प्रत्यर्थी-निगम के अधिवक्ता ने यह तर्क दिया है कि जैसा कि अपीलकर्ता ने सुझाव दिया था कर आय पर कर नहीं माना जा सकता है, लेकिन यह वास्तव में नियोजन पर कर था क्योंकि यह नियोजन के दौरान पिछली सेवाओं को ध्यान में रखते हुए था कि पेंशन देय थी। इस तर्क को उच्च न्यायालय के विद्वान न्यायाधीशों के समक्ष

स्वीकृत रूप से प्रस्तुत नहीं किया गया था और यह स्पष्ट रूप से मानने लायक नहीं है। आइटम 60 में निर्दिष्ट कर किसी वृति, व्यापार आदि को चलाने पर लगने वाले कर हैं और इसलिए, केवल वर्तमान नियोजन के मामले पर ही लागू होंगे। केवल यह तथ्य कि कोई व्यक्ति पहले किसी वृति में रहा है या व्यापार आदि करता रहा है, इस प्रविष्टि के तहत कर को उचित नहीं ठहरा सकता है। पेंशन की प्राप्ति या निवेश से आय पर कर, जिसको धारा 111 (1) के अंतिम भाग में संदर्भित किया गया है, वास्तव में सार रूप से आय पर कर है और वास्तव में उच्च न्यायालय के समक्ष बहस इसी आधार पर आगे बढ़ी, विद्वान न्यायाधीशों ने भी तो ऐसा ही किया। जिस समय कर लगाया जाता है, उस समय पेंशनभोगी किसी नियोजन में नहीं होता है, बल्कि उसे केवल आय प्राप्त होती है, भले ही वह किसी नियोजन में पिछली सेवाओं के लिए हो।

उन्होंने आगे तर्क प्रस्तुत किया है कि 1936 का अधिनियम X, जो भारत सरकार अधिनियम, 1935 से पहले अधिनियमित किया गया था, को भारत सरकार अधिनियम की धारा 292 के अनुसार मौजूदा कानून के रूप में जारी रहा था और चूंकि भारत सरकार अधिनियम में इसकी निरंतरता के खिलाफ कुछ भी नहीं था, इसलिए यह धारा 143 (2) की शर्तों के बावजूद भी प्रभावी होगा बावजूद इसके कि ये वर्तमान कर से संतुष्ट नहीं थी। उच्च न्यायालय के विद्वान न्यायाधीशों ने इस दलील को स्वीकार कर लिया। हमारी राय में, वे ठीक थे। जहां तक अनुच्छेद 372 व उससे संगत भारत सरकार अधिनियम की धारा 292 व अनुच्छेद 277 व उससे संगत भारत सरकार अधिनियम की धारा 143(2) के बीच संबंध के प्रश्न पर इस न्यायालय द्वारा विचार साउथ इंडिया कॉरपोरेशन (पी) लिमिटेड बनाम सचिव, राजस्व बोर्ड, त्रिवेन्द्रम वाले मामले में किया गया था और इस न्यायालय ने कहा:

"यह स्थापित कानून है कि एक विशेष प्रावधान को उसके दायरे की सीमा तक प्रभावी किया जाना चाहिए, उन मामलों को नियंत्रित करने के लिए सामान्य प्रावधान को छोड़ दिया जाना चाहिए जहां विशेष प्रावधान लागू नहीं होता है। पहले की चर्चा यह

पूर्ण रूप से स्पष्ट करती है कि संविधान वित्त के विषय को एक अलग उपचार देता है, और अनुच्छेद 277 राज्यों द्वारा लगाए गए मौजूदा करों आदि को बचाता है, यदि उसमें उल्लिखित शर्तों का अनुपालन किया जाता है। जबकि अनुच्छेद 372 सभी संविधान पूर्व वैध कानूनों को बचाता है, अनुच्छेद 277 केवल उन करों, उपकर, अधिकरों या शुल्क तक ही सीमित है, जो कि संविधान से ठीक पहले कानूनी रूप से लगाए गए थे। इसलिए, अनुच्छेद 372 को इस तरह से नहीं समझा जा सकता है कि करों, उपकर, अधिकरों या शुल्क की व्यावर्ती के दायरे को बढ़ाया जा सके। इसे अलग तरीके से इस प्रकार कहा जा सकता है कि अनुच्छेद 372 को अनुच्छेद 277 के अधीन पढ़ा जाना चाहिए।"

इसके बाद विद्वान अधिवक्ता ने हमारा ध्यान भारत सरकार अधिनियम, 1935 की धारा 142-क (1) की ओर आकर्षित किया और हल्के से सुझाव दिया कि इससे उसे कुछ सहायता मिल सकती है। इस प्रावधान को, फिर से, उच्च न्यायालय के विद्वान न्यायाधीशों के समक्ष और उचित कारण के चलते प्रस्तुत नहीं किया गया था। धारा 142-ए(1) जो संविधान के अनुच्छेद 276(1) के संगत है, अधिनियमित करती हैः

"इस अधिनियम की धारा एक सौ में कुछ भी अन्य होने के बावजूद प्रांत या नगर पालिका, जिला बोर्ड, स्थानीय बोर्ड या अन्य स्थानीय प्राधिकरण के लाभ के लिए वृत्ति, व्यापार, उद्यम या नियोजन के संबंध में करों से संबंधित कोई प्रांतीय कानून इस आधार पर अमान्य नहीं होंगे कि यह आय पर कर से संबंधित है।"

यह धारा प्रत्यर्थी की सहायता तभी करेगी जब लगाया गया कर किसी वृत्ति, व्यापार, उद्यम या नियोजन पर लगाया गया हो और उस स्थिति में यह धारा कहती है कि इस तरह के कर को आय पर कर नहीं माना जाएगा, लेकिन जहां लगाया गया कर किसी वृत्ति आदि पर बिल्कुल नहीं है , इसका मतलब यह नहीं है कि राज्य आय पर कर लगा सकता है और इसे "वृत्ति कर"कहे। यह प्रांतीय विधायी सूची (सूची II) में संशोधित

प्रविष्टि 46 के दायरे के संबंध में समान तर्क को निपटाने के लिए पर्याप्त है, जिसके बारे में हम पहले बता चुके हैं।

अपील तदनुसार सफल होती है और अपीलकर्ता को उच्च न्यायालय में दायर की गई याचिका में मांगे गए अनुतोष का हकदार माना जाता है, अर्थात, मांग को लागू करने से राेकने के लिए प्रत्यर्थी-निगम के विरुद्ध प्रतिषेध रिट। अपीलकर्ता यहां और उच्च न्यायालय में उत्तरदाताओं से स्वयं का खर्चा पाने का हकदार होगा।

अपील स्वीकार।

सत्य नारायण टेलर

न्यायाधीश

पारिवारिक न्यायालय संख्या 1

भरतपुर